

महादेवी वर्मा की दृष्टि में भारतीय नारी का चित्रण**LATA VERMA**Research Scholar
Kalinga University
Chhattisgarh**DR. DARSHANA**Supervisor
Kalinga University
Chhattisgarh**सार—**

छायावादी प्रकृति, तरल, सरल सौन्दर्य पर प्रेम, विरह और वेदना का स्वर संधान कर, उस विरह वेदना को रहस्यमयी अध्यात्म चेतना की अंतरंग अनुभूतियों से सजा-संवार कर, अपने काव्यमय स्वरों में जिसने महनीय, काम्य एवं ग्राह्य बना दिया, उस महान् विभूति का नाम है—श्रीमती महादेवी वर्मा। इनका साहित्यिक व्यक्तित्व बहुआयामी है, क्योंकि वह काव्य, रेखाचित्र, निबंध और आलोचना साहित्य से निर्मित हुआ है। वस्तुतः इनके द्वारा सृजित साहित्य की दो धुरियाँ हैं। एक धुरी उनका काव्य है, जिसमें करुणा और वेदना की अजस्र धारा प्रवाहित हुई है। दूसरी धुरी गद्य साहित्य है, जिसमें उनकी सामाजिक यथार्थ दृष्टि एवं सामाजिक चिंतनधारा है। उनके सामाजिक चिंतन का उत्कर्ष 'शृंखला की कड़ियाँ' (1942) निबंध संग्रह में संगृहीत निबंधों में देखा जा सकता है, जिसमें भारतीय नारी विषयक चिंतन व्यवस्थित है।

इन निबंधों में प्रमुख हैं—हमारी शृंखला की कड़ियाँ, युद्ध और नारी, नारोत्व का अभिशाप, आधुनिक नारी, हिन्दू स्त्री का पत्नीत्व, स्त्री के अर्थ स्वातंत्र्य का प्रश्न आदि। इनमें भारतीय नारी की परवशता का रेखांकन दृष्टिगोचर होता है, किन्तु उन्होंने जिन सवालों को उठाया है, वहाँ आक्रोश नहीं है, वरन् एक प्रकार की शालीनता है। इसलिए कि वे सृजन पर विश्वास करती हैं और उनका ध्वंस के द्वारा पुनर्सृजनपर विश्वास नहीं है। इससे स्पष्ट होता है कि वे भारतीय समाज की विकृतियों को सृजन के द्वारा मिटाना चाहती हैं, जिनसे भारतीय नारी प्रारंभ से ही अनेक कठिनाइयों का सामना कर रही है।

प्रस्तावना—

महादेवी वर्मा का नारी चिंतन समाज केन्द्रित है, फलतः तटस्थ और निष्पक्ष है। वे नारी जीवन की विडम्बनाओं के लिए पुरुषों को ही दोषी नहीं ठहराती, बल्कि महिलाओं को भी समान रूप से उत्तरदायी ठहराती है। 'अपनी बात' में वह कहती है, "समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर करता है और यह ज्ञान ज्ञाता की अपेक्षा रखता है। अतः अधिकार के इच्छुक व्यक्ति को अधिकारी भी होना चाहिए। सामान्यतः भारतीय नारी में इसी विशेषता का अभाव मिलेगा।" भारतीय नारी की अदृष्ट विडम्बना को उजागर करते हुए उन्होंने लिखा कि एक ओर तो वह देवी के प्रतिष्ठापूर्ण पद पर शोभित है तो दूसरी ओर परवश भी। उनका कथन है, "वह पवित्र देव मन्दिर की अधिष्ठात्री देवी भी बन चुकी है और अपने गृह के मलिन कोने की बन्दिनी भी।" श्रीमती वर्मा ने समाज की पूर्णता हेतु पुरुष एवं नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व को आवश्यक माना। उनकी दृष्टि में नारी को पुरुष की छाया मात्र मानना नारी जाति के लिए अभिशाप है। प्राचीन भारती की विदुषी मैत्रेयी, सीता, यशोधरा आदि के साथ महाभारतकालीन स्त्रियों के व्यक्तित्व की चर्चा करते हुए लिखा, "महाभारत के समय की कितनी ही स्त्रियाँ अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व तथा कर्तव्यबुद्धि के लिए स्मरणीय रहेंगी। उनमें से प्रत्येक संसार पथ में पुरुष की संगिनी है, छाया मात्र नहीं।" उन्होंने नारियों को पुरुषोचित अनुकरण वृत्ति को उचित नहीं माना, क्योंकि इससे सामाजिक शृंखला शिथिल तथा व्यक्तिगत बंधन और संकुचित होते हैं। इसीलिए वे भारतीय समाज में नारी की दयनीय स्थिति के लिए नारी के अर्थहीन अनुसरण और अनर्थमय अनुकरण को जिम्मेदार ठहराती है— "पुरुष के अन्धानुकरण ने स्त्री के व्यक्तित्व को अपना दर्पण बनाकर उसकी उपयोगिता को सीमित कर ही दी, साथ ही समाज को भी अपूर्ण बना दिया।" दोनों की तुलना करते हुए वह कहती हैं— "पुरुष समाज का न्याय है, स्त्री दया, पुरुष प्रतिशोधमय क्रोध है, स्त्री क्षमा, पुरुष शुष्क कर्तव्य है, स्त्री सरस सहानुभूति और पुरुष बल है, स्त्री हृदय की प्रेरणा।" इस प्रकार उनकी दृष्टि में स्त्री-पुरुष के प्राकृतिक मानसिक वैपरीत्य द्वारा ही समाज सामंजस्यपूर्ण व अखण्ड हो सकता है।

श्रीमती वर्मा ने सामाजिक बंधनों को उनके वैयक्तिक विकास में बाधक माना। चूंकि वह भी समाज का आधा हिस्सा है, अतः उसकी उपेक्षा के प्रति सचेत करते हुए लिखा, "जो देश के भावी नागरिकों की विधाता हैं, उनकी प्रथम और परम गुरु हैं, जो जन्म भर अपने आपको मिटाकर, दूसरों को बनाती रहती हैं, वे केवल तभी तक आदरहीन मातृत्व तथा अधिकार शून्य पत्नीत्व स्वीकार करती रह सकेंगी, जब तक उन्हें अपनी शक्तियों का बोध नहीं होता। बोध होने पर वे

बन्दिनी बनाने वाली श्रृंखलाओं को स्वयं तोड़ फेंकेंगी।" 'युद्ध और नारी' विषयक लेख में उन्होंने नारी को अहिंसा प्रिय बताया तथा युद्ध को नारी के विकास में भी बाधक बताया, "स्त्री केवल शारीरिक और मानसिक दृष्टि से ही युद्ध के अनुपयुक्त नहीं रही, वरन् युद्ध उसके विकास में भी बाधक रहा है।"

नारी के महान् से महान् त्याग को भी संसार ने उच्च दृष्टि से स्वीकार न कर उसे उसकी दुर्बलता माना। 'नारीत्व के अभिशाप' विषय पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा, "क्या नारी के बड़े से बड़े त्याग को, आत्मनिवेदन को, संसार ने अपना अधिकार नहीं, किंतु उसका अद्भुत दान समझकर नम्रता से स्वीकार किया है? कम से कम इतिहास तो नहीं बताता कि उसके किसी बलिदान को पुरुष ने उसकी दुर्बलता के अतिरिक्त कुछ और समझने का प्रयत्न किया।" उन्हें इस बात का भी क्षोभ है कि नारी ने अपनी शक्ति को समझने का कभी प्रयास ही नहीं किया। वह स्वयं अपनी वेदना के कारणों को नहीं जानती और न अपने असह्य कष्ट के प्रतिकार की भावना से परिचित है। वे नारी की कोमलताजनित दुर्बलता को भी अभिशाप मानती हैं, जिसके कारण वह उसे जीवन की स्वाभाविकता मान लेती है— "वह अपनी प्रकृति—जनित कोमलता को त्रुटि चाहे मानती हो, परन्तु उसे स्वाभाविक अवश्य समझती है, अन्यथा उसके इतने प्रयास का कोई अर्थ न होता।"

आधुनिक नारियों की स्वच्छन्द प्रवृत्ति व निरुद्देश्य गंतव्य को अनुचित ठहराते हुए उन्होंने प्राचीन नारियों के योगदान को तुलनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत किया। आधुनिक नारी और प्राचीन नारी के बारे में वे कहती हैं, "आज की सुन्दर नारी भी पुरुष के निकट और कोई विशेष महत्त्व नहीं रखती। उसे स्वयं भी इस कटु सत्य को बोध होता है, परन्तु वह उसे परिस्थिति का दोषमात्र समझती है।..... पहले की नारी जाति केवल रूप और वय का पाथेय लेकर संसार यात्रा के लिए नहीं निकली थी। उसने संसार को वह दिया जो पुरुष नहीं दे सकता था, अतः उसके अक्षय वरदान का वह आज तक कृतज्ञ है।"

महादेवी जी ने नारी के घर और बाहर के कर्तव्यों एवं अधिकारों की कठिनाइयों पर भी चिंतन किया है। उनका मानना है कि युगों से नारी का कार्यक्षेत्र घर तक सीमित रहा है, किंतु आधुनिक काल में उसके कर्तव्यों का विस्तार हुआ है। वे कहती हैं, "वास्तव में स्त्री भी अब केवल रमणी या भार्या नहीं रही, वरन् घर के बाहर भी समाज का एक विशेष अंग तथा महत्त्वपूर्ण नागरिक है, अतः उसका कर्तव्य भी अनेकाकार हो गया है, जिसके पालन में कभी-कभी ऐसे संघर्ष के अवसर आ पड़ते हैं, जिसमें किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाना पड़ता है।" महादेवी जी ने पुरुषों की इस धारणा को नकार दिया है कि आधुनिक शिक्षा प्राप्त स्त्रियाँ अच्छी गृहणियों का बाहर आकर इस क्षेत्र में कुछ करने की स्वतंत्रता देनी होगी। वे लिखती हैं, "जब तक हम अपने यहाँ गृहणियों को बाहर आकर इस क्षेत्र में कुछ करने की स्वतंत्रता न देंगे, तब तक हमारी शिक्षा में व्याप्त विष बढता ही जाएगा।"

महीयसी महादेवी जी ने हिन्दू स्त्री के पत्नीत्व की भी चर्चा की है और बताया है कि हमारे समाज में उसके जीवन का प्रथम लक्ष्य पत्नीत्व तथा अंतिम मातृत्व समझा जाता रहा है। यहाँ वे समाज से प्रश्न करती हैं—"समाज की स्थिति के लिए मातृत्व पूज्य है, व्यक्ति की पूर्णता के लिए सहधर्मिणीत्व भी श्लाघ्य है, परन्तु क्या यह माना जा सकता है कि सौ में से सौ स्त्रियों की शारीरिक तथा मानसिक स्थिति केवल इन्हीं दो उत्तरदायित्वों के उपयुक्त होगी? शिक्षा की दृष्टि से नारियों की सामाजिक यथार्थ की स्थिति का सटीक चित्रण करते हुए कहा, "प्रथम तो माता—पिता कन्या की शिक्षा के लिए कुछ व्यय ही नहीं करना चाहते, दूसरे यदि करते भी हैं तो विवाह की हाट में उनका मूल्य बढ़ाने के लिए, कुछ उनके विकास के लिए नहीं।" किन्तु उनका मानना है कि स्त्री के विकास की चरम सीमा उसके मातृत्व में हो सकती है, बशर्ते कि उसकी इच्छा—अनिच्छा, योग्यता—अयोग्यता का पूरा ध्यान रखा गया हो।

महादेवी जी ने वार—वनिताओं की विडम्बनाओं पर भी गहरा चिंतन किया है। उनका मानना है कि गर्वित समाज, जिन्हें पतित नारी की संज्ञा देता है, वस्तुतः ऐसी नारियों ने पुरुष वासना की वेदी पर घोरतम बलिदान किया है। वे कहती हैं, "उनके नारीत्व को दूसरों के मनोरंजन मात्र का ध्येय मिला है तथा उनके जीवन का तितली जैसे कच्चे रंगों से श्रृंगार हुआ है, जिसमें मोहकता है, परन्तु स्थायित्व नहीं।" दूसरी ओर साधारणतः महान् दुराचारी पुरुष भी परम सती स्त्री के चरित्र का आलोचक ही नहीं, न्यायकर्ता भी बना रहता है। ऐसी स्थिति में पतित स्त्रियों के जीवन में परिवर्तन लाने का स्वप्न सत्य नहीं हो सकता।

महादेवी वर्मा ने आदिम युग से लेकर सभ्यता के विकास तक भारतीय समाज में स्त्री की दयनीय दशा का वर्णन किया है। उनकी दृष्टि में इसका कारण स्त्री और पुरुष के अधिकारों की विचित्र विषमता है। वे कहती हैं, "पुरुष ने उसके अधिकार अपने सुख की तुला पर तोले, उसकी विशेषता पर नहीं, अतः समाज की सब व्यवस्थाओं में उसके और पुरुष के अधिकारों में एक विचित्र विषमता मिलती है।... एक ओर सामाजिक व्यवस्थाओं ने स्त्री को अधिकार देने में पुरुष की सुविधा का विशेष ध्यान रखा है, दूसरी ओर उसकी आर्थिक स्थिति भी परावलम्बन से रहित नहीं रही। भारतीय स्त्री के संबंध में पुरुष का भर्ता नाम जितना यथार्थ है, उतना संभवतः और कोई नाम नहीं।" इसीलिए वे अपनी बात स्पष्ट रूप से कहती हैं कि आर्थिक रूप से जो स्थिति स्त्री की प्राचीन समाज में थी, उसमें अब तक परिवर्तन नहीं हो सका है।

वास्तव में स्त्री केवल पत्नी के रूप में समाज का अंग नहीं है। महादेवी जी की दृष्टि में उसके भिन्न-भिन्न रूपों में व्यापक तथा सामान्य गुणों द्वारा ही समझना समाज के लिए आवश्यक तथा उचित है। वे लिखती हैं, "आज की हमारी सामाजिक परिस्थिति कुछ और ही है। स्त्री न घर का अलंकार मात्र बनकर प्राण-प्रतिष्ठा चाहती है।... आज उसके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष को चुनौती देकर अपनी शक्ति की परीक्षा देने का प्रण किया है और उसी में उत्तीर्ण होने को जीवन की चरम सफलता समझती है।" वर्तमान समाज में नारी के साथ होने वाले व्यवहार पर उन्होंने बेबाक टिप्पणी की है। "जैसे-जैसे हमारा समाज अपने आधे सदस्यों से अधिकारहीन बलिदान और आत्म-समर्पण लेता जा रहा है, वैसे-वैसे वह भी अपने अधिकार खोता जा रहा है, यह समाज के असंतोषपूर्ण वातावरण से प्रकट है।"

वस्तुतः साठोत्तरी चिंतन में नारी चिंतन की दिशा बदल सी गई है। जहाँ भारतीय समाज की सीमाओं का अतिक्रमण करते हुए एक आधुनिक एवं पुरुष से परे तथा उसके समानांतर स्त्री की छवि गढ़ी जा रही है, इसके विपरीत महादेवी वर्मा का लेखन भारतीय संस्कृति की परिधि में स्त्रियों की महत्ता की प्रतिस्थापना है, साथ ही स्त्री की सामाजिक एवं आर्थिक स्वतंत्रता पर चिंतन भी है। 'शृंखला की कड़ियाँ' पुस्तक में स्त्री समाज की समस्याओं पर विचार के बहाने उन संदर्भों और संकेतों का सामाजिक रूप भी प्रस्तुत किया गया है, जिनसे स्त्री-समाज के अंदर हो रहे परिवर्तन और विकास की प्रक्रियाओं को समझा जा सकता है। देवेन्द्र चौबे के मतानुसार, 'शृंखला की कड़ियाँ' मात्र एक पुस्तक नहीं है, बल्कि इसमें स्त्री के सामाजिक इतिहास लेखन के स्रोत मौजूद हैं, जो स्त्री विषयक इतिहास लेखन की दशा और दिशा को तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।"

महादेवी वर्मा ने 1935 में 'चाँद' पत्रिका के विदुषी अंक का संपादन किया था। पत्रिका के संपादकीय में आधुनिक महिला जगत् की स्थिति पर उनकी टिप्पणी थी, "अवश्य ही आज की नारी प्राचीन नारी जगत् की वंशज नहीं जान पड़ती, इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि वह स्वयं अपनी शक्ति और दुर्बलता दोनों से अनभिज्ञ है।" विश्वंभर मानव के अनुसार, "भारतीय नारी का मुख्य दोष महादेवी जी ने यह बतलाया है कि उसमें व्यक्तित्व का अभाव है। उसे न अपने स्थान का ज्ञान है, न कर्तव्य का। जो लोग उसकी सहायता करना चाहते हैं, वह उन्हीं का विरोध करती है।" डॉ. रामचन्द्र तिवारी ने लिखा है, "महादेवी ने नारी को केन्द्र में रखकर ही समस्याओं पर दृष्टिपात किया है। इन निबंधों में उनका भारतीय नारी के प्रति सहानुभूति से भरा हुआ मन उन सामाजिक तत्वों के प्रति क्षुब्ध है जो नारी के लिए 'शृंखला की कड़ियाँ' बन गए हैं। महादेवी शृंखला की कड़ियों को काट फेंकने के लिए नारी को उदबुद्ध करना चाहती हैं, किंतु वे यह भी चाहती हैं कि विद्रोहिणी नारी अपने नारीत्व के मूलभूत आधारों को भी सुरक्षित रखे।" वस्तुतः महादेवी जी का नारी चिंतन कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। क्योंकि यह उस समय का है जब भारतीय नारी का 90 प्रतिशत हिस्सा निरक्षर था तथा सामाजिक चेतना नहीं के बराबर थी। आज तो नारी साहित्य लेखन के भी केन्द्र में आ गई है। 'नारी-विमर्श' के नाम पर अंतहीन बहसों भी हो रही हैं, जहाँ कभी देहवाद की चर्चा होती है तो कहीं उसे स्वैराचार की अनुमति दी जाती है। कहीं उसकी पुरुषों से तुलना कर उसकी मालिकता को खतरे में डाला जा रहा है, फिर भी ऐसा नहीं लगता है कि भारतीय समाज में नारी की स्थिति में कोई विशेष सुधार आया है। भले ही आज सरकारी आरक्षण से नारी की सामाजिक गति बढ़ी है, किंतु अपने परिवार के भीतर उसकी स्थिति पूर्ववत् ही है। 'स्त्री-विमर्श' के इस दौर में नारी जाति के गौरव को पुनः दिलाना तो दूर, बल्कि उसके स्वाभाविक गुणों को भी नेस्तनाबूद किया है। यह सब पाश्चात्य-मानसिकता का फल है।

निष्कर्ष—

परंतु महादेवी जी का नारी-चिंतन भारतीय परिवेश को ध्यान में रखकर है, अतः कई अर्थ भी रखता है। यह किसी प्रकार की प्रभुता की आकांक्षा नहीं करता, बल्कि इसका स्वर नपा-तुला और सामंजस्यपूर्ण है और उन बुनियादी सवालों को उठाता है, जिसका परिवार से लेकर राष्ट्र निर्माण में महत्व असंदिग्ध है। उनका चिंतन परम्परा के बंधनों से जकड़ी नारी

के लिए देह की मुक्ति की बजाय सत्ता को चुनौती देता है। इसीलिए यह चिंतन आधी नागरिक जाति को अपने अधिकारों और कर्तव्यों की याद दिलाता है और उन्हें पाने और दिलाने के लिए संघर्ष की प्रेरणा देता है, जिसका अंतिम ध्येय सभ्य और सुसंस्कृत समाज का पुनर्निर्माण करना है। इस तरह उनका नारी विषयक चिंतन स्त्री विषयक इतिहास लेखन की दशा और दिशा को तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यदि आज के 'नारी-विमर्श' के केन्द्र में महादेवी का चिंतन भी सम्मिलित कर लिया जाए तो उस विमर्श के सार्थक परिणाम आ सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची—

1. हिन्दो के आधुनिक प्रतिनिधि कवि—डॉ. सुरेश अग्रवाल, अशोक प्रकाशन, दिल्ली सं.1998, पृष्ठ 251
2. शृंखला की कड़ियाँ— महादेवी वर्मा लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सं.2004 पृ.10
3. आजकल, मार्च 2007, सं. प्रवीण उपाध्याय, पृ.56
4. हिन्दी साहित्य का सर्वेक्षण, सं. विश्वंभर मानव, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.सं.1977, पृ.155
5. हिन्दी का गद्य साहित्य, सं. रामचन्द्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पुनमुद्रण, 1999, पृ.630
6. वशिष्ठ, आर.के. (2002). आजकल (मासिक पत्रिका) अंक—7. लखनऊ, भारत सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, उ.प्र. पृ. 24.
7. गोपेश, अनिता (2007). आजकल (मासिक पत्रिका) अंक—11. नई दिल्ली, भारतरू प्रकाशन विभाग, सूचना भवन. पृ. 31.
8. मालवीय, यश (2007). आजकल (मासिक पत्रिका) अंक—11. नई दिल्ली, भारतरू प्रकाशन विभाग, सूचना भवन. पृ. 43.
9. वशिष्ठ, आर.के. (2002). उत्तर प्रदेश (मासिक पत्रिका) अंक—7. लखनऊ, भारत सूचना एवं जनसंपर्क विभाग, उ.प्र. पृ. 25.